बिज़नेस स्टैंडर्ड

जनसंख्या नियंत्रण नहीं जीवन की गुणवत्ता से हासिल होगा लक्ष्य

मुद्रा मंत्र

सुबीर रॉय

देश के नीति निर्माता पारंपरिक तौर पर देश की जनसंख्या दर को लेकर चिंतित रहे हैं। देश की आबादी गरीबी से लड़ाई में पिछड़ी रही है। हाल के वर्षों में यह चिंता एकबारगी खत्म हो गई क्योंकि जननांकीय लाभांश शब्द हमें बार-बार सुनाई देने लगा। तेजी से बढ़ती आबादी एक विशालकाय युवा आबादी भी तैयार करती है जो न केवल उच्च आर्थिक विकास की राह बनाती है बल्कि उम्रदराज होती आबादी की चिंता भी उसकी वजह से कम होती है क्योंकि वे अपने बुजुर्गों का ध्यान रखते हैं।

लेकिन इन दो सामान्य बातों के बीच कुछ जटिल संदर्भ भी हो सकते हैं जो परस्पर विरोधाभासी दिशा में जाते प्रतीत हों। ऐसे में यह कहना कठिन है कि भारत जनसंख्या के लिहाज से बेहतर स्थिति में है अथवा नहीं। हां उसकी मौजूदा संतति दर (अपने जीवनकाल में एक स्त्री द्वारा जितने बच्चों को जन्म दिए जाने की संभावना हो) में कमी आई है और वह तकरीबन उस स्थिति में आ गई है जहां जन्म केवल मृत्यु का स्थानापन्न हो रहा है। यानी जन्म और मृत्यु का आंकड़ा सम पर है। हां, पांच साल से कम उम्र के बच्चों की मृत्यु दर अवश्य विकसित देशों की तुलना में अधिक बनी हुई है। उच्च जन्म और मृत्यु दर वाले गरीब देशों में भी आबादी स्थिर रह सकती है लेकिन हम अभी उस बारे में बात नहीं करेंगे। देश की समग्र संतति दर तेजी से गिर रही है।

विश्व बैंक के आंकड़ों के मुताबिक वर्ष 1985 के 4.5 से घटकर वर्ष 2013 में यह 2.3 रह गई। इतना ही नहीं शहरी इलाकों में यह 1.8 रह गई है। यह दर ब्रिटेन के बराबर और अमेरिका के 1.9 से थोड़ी कम है। लेकिन शहरी और ग्रामीण भारत के बीच का अंतर अहम है क्योंकि देश के अधिकांश लोग ग्रामीण इलाकों में रहते हैं जबकि विकसित देशों की अधिकांश आबादी शहरी इलाकों में रहती है। लेकिन यह किस दिशा में जा रही है इसे लेकर कोई अनिश्चितता नहीं है। वहीं दूसरी ओर देश में पांच वर्ष से कम उम्र बच्चों की मृत्यु दर गिरावट के बावजूद खासी ऊंची बनी हुई है। वर्ष 2015 में देश में पांच से कम उम्र के बच्चों की मृत्यु का आंकड़ा 48 प्रति हजार था जबकि श्रीलंका में यह 10 और विकसित देशों में 3 से 7 के बीच था।

इस स्थिति में जबकि जन्म दर पर सफलतापूर्वक नियंत्रण कायम किया जा चुका है और वह तकरीबन विकसित देशों के समान है, ऐसे में मृत्यु दर को भी समान रूप से कम किया जा सकता है। ऐसे में आगे का परिदृश्य कैसा है? मृत्यु दर में संभावित तेज गिरावट और कुल प्रजनन दर में कमी के कारण जनसंख्या वृद्धि दर में और कमी आने की अपेक्षा है। बीते तीन दशकों में जनसंख्या वृद्धि दर तकरीबन आधी रह गई है। वर्ष 1985 में यह जहां 2.3 फीसदी थी, वहीं 2014 में यह 1.2 प्रतिशत रह गई। ऐसे में कहा जा सकता है कि प्रजनन दर और मृत्यु दर को एक दूसरे के समान होने में तकरीबन तीन दशक का समय और लगेगा। उस वक्त देश की जनसंख्या में स्थिरता आएगी।

ऐसे में नीतिगत ध्यान किस बात पर केंद्रित होना चाहिए। एक संक्षिप्त और गलत उत्तर है गर्भनिरोधकों के बढिय़ा प्रयोग की मदद से ग्रामीण इलाकों में जन्म दर में कमी लाना। दरअसल बच्चचों की संख्या में कमी लाने पर ध्यान देकर हम चीन जैसी स्थिति में पड़ सकते हैं। चीन की दशकों पुरानी एक बच्चा पैदा करने वाली नीति को हाल में त्याग दिया गया। इसकी वजह से देश की आबादी तेजी से बूढ़ी हो रही थी। भविष्य को बेहतर बनाने का एक अच्छा तरीका यह हो सकता है कि जनसंख्या नियंत्रण को भुला दिया जाए और उसकी जगह जीवन की गुणवत्ता सुधारने पर ध्यान दिया जाए। इसकी शुरुआत जच्चा-बच्चा की देखरेख में क्रांतिकारी सुधार की मदद से की जा सकती है। अगर मां स्वस्थ हो और जल्दी जल्दी बच्चे न पैदा करे तो पैदा होने वाले बच्चे समुचित ढंग से बड़े हो सकेंगे।

इसके साथ ही साथ नीति में बेहतर शिक्षा और कौशल विकास पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। जन स्वास्थ्य की गुणवत्ता सुधारने पर भी काम किया जाना चाहिए ताकि समाज पर से बीमारियों का बोझ कम हो सके। ऐसा करके हम जननांकीय लाभ लेते हुए अधिक उत्पादक कार्य क्षमता वाले लोग तैयार कर सकेंगे। लब्बोलुआब यह है कि जीवन की गुणवत्ता पर ध्यान दिया जाए तो जनसंख्या और आर्थिक वृद्धि दर अपना ध्यान खुद रख लेंगी। केवल 8 फीसदी से अधिक की वृद्धि दर पर ध्यान लगाए रखने से कुछ नहीं हासिल होगा

वैश्वीकृत विश्व में भारत की कर नीति

मॉरीशस, पनामा और संस्थागत विदेशी निवेश के बारे में बात करते वक्त हमें सार्वजनिक वित्त के सिद्धांतों का भी ध्यान रखना होगा। विस्तार से जानकारी दे रहे हैं अजय शाह

वैश्वीकरण का पहला दौर था वस्तुओं एवं सेवाओं को मुक्त करने का आंदोलन। सन 1950 के दशक में सार्वजनिक वित्त पर विचार करने वालों को कर व्यवस्था में सुधार करना पड़ा था ताकि कर व्यवस्था के गतिरोध को समाप्त किया जा सके। सीमाशुल्क का प्रयोग राजस्व के एक अहम स्रोत के रूप में किया जाता था लेकिन इसको समाप्त किया गया क्योंकि यह सीमापार गतिविधियों में हस्तक्षेपकारी थी। इसके बाद अप्रत्यक्ष कर की समस्या आई। अगर भारत ने घरेलू इस्पात पर 20 प्रतिशत उत्पाद शुल्क लगा रखा है तो उचित यही होगा कि आयातित इस्पात पर भी 20 फीसदी कर लगाया जाए। अगर ब्रिटेन में इस्पात पर कर नहीं है तो भारतीय कंपनी वहां के स्थानीय इस्पात उत्पादक का मुकाबला ही नहीं कर पाएगी। इसका हल दो चरणों में है: पहला, मूल्यवर्धित कर (वैट) का रुख करना और दूसरा निर्यात की शून्य रेटिंग। वैट ने आपूर्ति शृंखला में घरेलू कर से जुड़ी व्यापक घटनाओं की रिपोर्टिंग आसान बना दी। तमाम मूल्यवर्धन पर कर लगाया जाने लगा। ऐसे में हम यह समझने लगे कि देश की कंपनियों को किस तरह का कर बोझ वहन करना पड़ता है। वहीं निर्यात पर शून्य रेटिंग के तहत विदेशी खरीदारों को पूरी कर राशि का पुनर्भुगतान कर दिया जाता है।

यह राजनीतिक व्यवस्था के लिए एक उल्लेखनीय कदम था। वैट की शून्य रेटिंग का विरोध हुआ। कहा गया कि ऐसा करके विदेशी खरीदारों को रियायत दी जा रही है या स्थानीय और विदेशी खरीदारों के लिए अलग-अलग व्यवस्था की जा रही है। वैश्वीकरण के युग में कर नीति का नियम यही कहता है कि आप अनिवासियों पर कर नहीं लगाते। अगर हम भारतीय इस्पात के फ्रांसीसी खरीदारों पर कर लगाने की कोशिश करते हैं तो वे अपना कारोबार कहीं और ले जाएंगे। ऐसे में भारत को भारतीय वस्तुओं और सेवाओं के सभी अनिवासी खरीदारों के कर का रीफंड करना पड़ेगा।

हम अपने निवासियों पर अपनी मर्जी से कर लगा सकते हैं। जब फ्रांसीसी इस्पात भारत आए तो हम अपनी मर्जी से कर लगा सकते हैं क्योंकि खरीदार स्थानीय है और उसके पास कोई विकल्प नहीं है। यह इस्पात भारत आता है तो भारत में प्रवेश के समय भारतीय अधिकारी निवास आधारित कर लगाते हैं। इसे आयात पर वैट कहा जाता है। कुछ देशों में राजनीतिक बाधाएं हैं जो अंतरराष्ट्रीय व्यापार को प्रभावित करती हैं। उदाहरण के लिए भारत और पाकिस्तान एक दूसरे के साथ नियमत: नहीं चलते। इसकी वजह से भारतीय वस्तुएं दुबई भेजी जाती हैं। वहां से वे वस्तुएं पाकिस्तान निर्यात होती हैं। क्योंकि भारत-दुबई और दुबई-पाकिस्तान के बीच नियम कायदे चलते हैं।

जब देश वैश्वीकरण के नियमों का पालन नहीं करते तो ऐसा होता है। इससे पुलिसकर्मियों, कर अधिकारियों आदि का काम जटिल होने लगता है। उनको कड़ी मेहनत करनी पड़ती है। इससे कर वंचना और अपराध के मौके पनपते हैं। इस लिहाज से कहा जाए तो दुबई जैसे पुनर्निर्यात केंद्र उन केंद्रों की मदद करते हैं जो वैश्वीकरण के नियमों का पालन नहीं करते। ये विचार पूंजी के प्रवाह और अंतरराष्ट्रीय वित्त पर भी इसी प्रकार लागू होते हैं। सिंगापुर निफ्टी वायदा बनाता है और ब्रिटेन भी। अगर सिंगापुर किसी जापानी खरीदार पर मामूली सा कर भी लगा दे तो वह ऑर्डर ब्रिटेन जाएगा। ऐसे में रिहाइश आधारित कराधान ही एकमात्र तरीका है। हर देश अपने नागरिकों की वैश्विक आय पर कर लगाता है और अनिवासियों को रियायत देता है।

जरा उस जोखिम पर विचार कीजिए जो भारत सरकार के बॉन्ड से जुड़ा है जिसे विश्व बाजार में 6 फीसदी ब्याज चाहिए। मान लीजिए कि हम अनिवासियों पर कर लगाने की कोशिश करते हैं और उनसे 2 फीसदी कर मांगते हैं। इससे भारत सरकार के बॉन्ड की ब्याज दर बढ़कर 8 फीसदी हो जाएगी। भारत सरकार के बॉन्ड 8 फीसदी चुकाते हैं और 2 फीसदी राशि बतौर कर भारत को वापस भेज दी जाती है। पांच वर्षीय बॉन्ड का मूल्य ब्याज दर के 6 से 8 प्रतिशत हो जाने पर 10 फीसदी तक घट जाएगा।

ओईसीडी मुल्क और परिपक्व उभरते बाजार नियमों को समझते हैं और उनके मुताबिक कदम उठाते हैं। कुछ देश ऐसे हैं जो स्रोत आधारित कटौती के लिए लालायित हैं। इससे पुनर्निर्यात कारोबार को बढ़ावा मिलता है। कुछ कारोबारी लेनदेन पनामा के जरिये होते हैं क्योंकि पनामा की कई देशों के साथ संधियां हैं। जबकि कुछ अन्य मॉरीशस के जरिये क्योंकि भारत और मॉरीशस की कर संधि है।

अगर कोई जापानी निवेशक निफ्टी फ्यूचर कारोबार सिंगापुर, लंदन या शिकागो भेजता है तो उसे वहां कोई कर नहीं चुकाना होता है। इसलिए क्योंकि ये सभी देश संबंधित नियमों का पालन करते हैं। जब भारत इस गतिविधि पर कर लगो का प्रयास करता है तो यह कारोबार उससे छिन जाता है। इसका असर देश के सेवा उद्योग के निर्यात राजस्व पर पड़ता है। मॉरीशस समझौते की मौजूदगी के चलते नुकसान कुछ कम होता रहा। लेकिन यह नुकसान इस रास्ते भी पूरी तरह समाप्त नहीं किया जा सका।

जब देश वैश्वीकरण के नियमों का पालन नहीं करते हैं। तब ऐसे पुनर्निर्यात केंद्रों की आवश्यकता पड़ती है। इससे पुलिसकर्मियों, कर अधिकारियों की मुश्किलें बढ़ती हैं। उनको हालात पर नजर रखने में मशक्कत करनी होती है। इससे करवंचना और अपराध के अवसर पैदा होते हैं। इस लिहाज से देखा जाए तो ये पुनर्निर्यात केंद्र ऐसे अड्डïे हैं जो वैश्वीकरण की प्रक्रिया को गहरा करते हैं खासकर उन देशों के लिए जो वैश्वीकरण की प्रक्रिया में शामिल नहीं हैं। वे इन देशों को होने वाले नुकसान को काफी हद तक सीमित कर देते हैं।

प्रवर्तन करने वालों की शिकायत है कि ये क्षेत्र कारोबारी लेनदेन की प्रक्रिया को अत्यधिक जटिल बना देते हैं और इससे उनकी समस्याएं बढ़ती हैं। हमें उनकी इस बात की अनदेखी करनी चाहिए। किसी पुलिसकर्मी का काम तभी आसान हो सकता है जब वह पुलिस शासित राज्य में हो। इन समस्याओं को समाप्त करने का रास्ता यही है कि हम अपनी कर नीति को आधुनिक बनाएं। हमने सोने की तस्करी सख्त कानूनों से नहीं रोकी बल्कि वैश्वीकरण के नियमों के पालन ने इसे रोकने में मदद की। यानी हमने सीमा शुल्क समाप्त करके इससे निजात पाई। कर नीति के सिद्धांत बहुत अहम हैं। ये भारत के बाहर होने वाली वित्तीय गतिविधियों, स्थायी प्रतिष्ठान, एफआईआई पर लगने वाले कर, कर संधियों, पनामा, एसटीटी आदि से संबंधित हैं।

दैनिक भास्कर

पाक के बौखलाने की वजह नहीं

- लेफ्टि. जन.(रिटा.) सैयद अता हसनैन

मानचित्रों का विषय जरा अलग-सा है और सुरक्षा व भू-राजनीति के संबंध में इसका महत्व गहराई से समझना आसान नहीं है। पृष्ठभूमि के लिए इतना जानना काफी है कि आधुनिक टेक्नोलॉजी व आसमान में मौजूद 'विभिन्न आंखों' से धरती के बारीक से बारीक ब्योरे देखे जा सकते हैं। कैटोग्राफी (मानचित्र विज्ञान) की दुनिया में क्रांति हुई है। आबादी, भौगोलिक ब्योरे और अन्य मानव निर्मित चीजों को अचूकता से पेश करना संभव हुआ है। रणनीतिक दृष्टि से ये सब खुफिया जानकारी है। इसके पहले दूसरों के कब्जे के क्षेत्र की ऐसी जानकारी पाने के लिए जासूस भेजने पड़ते थे।

सीमाओं के पार हमले करने वाले आतंकवाद के साथ आतंकी गुटों के लिए इंटरनेट से जानकारी पाना संभव हुआ। वेब पर कॉर्टोग्राफिक व नेविगेशन उपकरणों से जुटाई अचूक जानकारी उपलब्ध है और आतंकी इनका दुरुपयोग हमलों की साजिश में करते हैं। मुंबई और हाल के पठानकोट हमले में यही किया गया था। जियोस्पेशियल इन्फॉर्मेशन का मतलब है उपग्रहों, विमान, बलून व मानव रहित यानों से प्राप्त जानकारी। जियोस्पेशियल इन्फॉर्मेशन रेग्यूलेशन बिल, 2016 के मसौदे में ऊपर बताई टेक्नोलॉजी से प्राप्त जानकारी का दुरुपयोग रोकने के लिए व्यापक दिशानिर्देश दिए गए हैं और इनके उल्लंघन पर कड़ी सजा व जुर्माने का प्रावधान है। इन प्रावधानों के दो पहलू हैं।

एक तो यह कि भारतीय भू-भाग के भीतर भू-स्थलीय जानकारी में कोई जानकारी जोड़ना या निर्मित करना हो तो सरकार से या इस मामले में सिक्योरिटी वेटिंग अथॉरिटी से इजाजत लेनी होगी। कानून के मसौदे में साफ कहा गया है, 'कोई भी व्यक्ति इंटरनेट प्लेटफॉर्म्स या ऑनलाइन सर्विस के जरिये भारत की अंतरराष्ट्रीय सीमाओं सहित भौगोलिक स्थिति के बारे में गलत या झूठी जानकारी प्रदर्शित, प्रसारित, प्रकाशित या वितरीत नहीं करेगा।' दूसरे शब्दों में यह टेक्नोलॉजी के इस्तेमाल पर पाबंदी नहीं, बल्कि उसका नियमन है।
अब पाकिस्तान की बात करें कि उसे किस बात पर आपत्ति है? उसने संयुक्त राष्ट्र में शिकायत की है कि भारत अपने नक्शों पर जम्मू-कश्मीर के विवादित क्षेत्र दिखाने के लिए मजबूर कर रहा है। इसकी पृष्ठभूमि समझनी होगी। जम्मू-कश्मीर का जो क्षेत्र वर्तमान में तीन देशों के कब्जे में है, वह हमेशा से ही अधिकृत रूप से भारतीय क्षेत्र रहा है। जम्मू-कश्मीर के तत्कालीन महाराजा हरि सिंह ने 26 अक्टूबर 1947 को जिस विलय-पत्र पर हस्ताक्षर किए थे, वह स्पष्ट रूप से जम्मू-कश्मीर के पूरे भू-भाग पर भारत का अधिकार स्थापित करता है। अभी अक्साई चिन अवैध रूप से चीन के पास है।

अधिकृत कश्मीर व गिलगित-बाल्टीस्तान अवैध रूप से पाकिस्तान के पास है और लद्दाख, कश्मीर घाटी और जम्मू हमारे पास हैं। पाकिस्तान तर्क देता है कि भारत ने क्षेत्र में जनमत संग्रह के संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव का पालन नहीं किया, इसलिए वह भाग इसके अवैध नियंत्रण में है। भारत का रुख एकदम स्पष्ट है, जिसे भारत के ताजा बिल को लेकर

पाकिस्तान की आपत्ति की रोशनी में समझने की जरूरत है। एक, जनमत संग्रह जम्मू-कश्मीर से हमलावर सैन्य बलों को वापस लेने के बाद किया जाना था।

विलय-पत्र पर 26 अक्टूबर 1947 को हस्ताक्षर हुए थे और भारतीय टुकड़ियां उसके बाद ही 27 अक्टूबर 1947 को जम्मू-कश्मीर में आई थीं। इस तरह चूंकि यह भारत का क्षेत्र हो चुका था, इसलिए इसे आक्रमण नहीं कहा जा सकता। जाहिर है हमलावर पाकिस्तान था और उसे जम्मू-कश्मीर से अपने सैन्य बल वापस लेने थे। दो, अक्साई चिन पर चीन के कब्जे के बाद जम्मू-कश्मीर का मुद्दा बदल जाने से संयुक्त राष्ट्र का प्रस्ताव निरर्थक हो गया।

तीन, पाकिस्तान ने स्थिति को बदलने के लिए तीन बार सैन्य बल का प्रयोग किया, जिससे फिर संयुक्त राष्ट्र की प्रक्रिया निष्प्रभावी हो जाती है। चार, 1972 के शिमला समझौते में द्विपक्षीय समाधान को मुख्य आधार माना गया और दोनों देशों के मामले में संयुक्त राष्ट्र प्रस्ताव की जगह इस समझौते ने ले ली। पांच, पाकिस्तान ने 1989 में भारत के खिलाफ छद्म युद्ध शुरू किया, जो आज तक जारी है।
22 फरवरी 1994 को संसद के दोनों सदनों ने संयुक्त प्रस्ताव पारित कर महाराजा के अधीनस्थ रहे पूर्ववर्ती जम्मू-कश्मीर रियासत के पूरे क्षेत्र को भारतीय क्षेत्र घोषित किया और कहा कि वह उन क्षेत्रों को वापस पाने के लिए प्रयास करेगा, जो फिलहाल उसके नियंत्रण में नहीं हैं। पाकिस्तान उस कानून का विरोध कर रहा है, जो भारत में किसी के लिए और विदेश में किसी भारतीय के लिए भारतीय भू-भाग की गलत प्रस्तुति अपराध हो जाएगी। पाकिस्तान को लगता है कि ऐसे कानून और भारत के बढ़ते अंतरराष्ट्रीय प्रभाव के चलते कई एजेंसियां भारतीय दावे का विरोध नहीं करेंगी। मसलन, समझा जाता है कि फेसबुक ने भारत के नक्शे पर जम्मू-कश्मीर की सही सीमा नहीं दिखाने के लिए माफी मांगी है। भारत के भीतर भारत की राष्ट्रीय सीमाओं की गलत प्रस्तुति के लिए कोई संवेदनशीलता नहीं है। मैं हाल ही में एक आयोजन में मौजूद था, जहां वक्ताओं द्वारा दिखाए पावर पॉइन्ट की स्लाइड्स में जम्मू-कश्मीर की सीमाओं को चारों तरफ से कटा-फटा दर्शाया गया था। एक विदेशी ने भी ऐसा नक्शा दिखाया। जब मैंने इस पर आपत्ति जताई तो वे माफी मांगने लगे और कहा कि उन्होंने यह जान-बूझकर नहीं किया। नया कानून उन लोगों को राहत देगा, जो

नई टेक्नोलॉजी और उसके जरिये हमारी राष्ट्रीय सीमाओं की गलत प्रस्तुति से विचलित रहे हैं।

यदि एक राष्ट्र के रूप में हम लगातार ऐसे नक्शे पेश करते रहे, जिसमें जम्मू-कश्मीर या अरुणाचल प्रदेश हमारे दावे के अनुरूप न हो तो हम नैतिक आधार पर अपने दावे को ही कमजोर करते हैं। इस कानून से इस बारे में जागरूकता पैदा होगी कि हम नक्शे पर अपनी सीमाएं दर्शाने में सावधानी बरतें। आम जानकारी के लिए बात दूं कि अाांख बंद करके इंटरनेट से नक्शे डाउनलोड करते वक्त यदि आप सतर्कता न बरतें तो आप यह गलती कर देते हैं। कानून से हमारी सीमाओं को लेकर आम जागरूकता में भी वृद्धि होगी।
आखिरी बात, अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा सार्वजनिक प्लेटफॉर्म पर प्रदर्शित भू-स्थानीय जानकारी में आतंकियों के लिए उपयोगी जानकारी होने की पूरी आशंका होती है। यह भारत से संबंधित सूचनाओं पर भी लागू होता है। इस कानून से भारत में होने वाले ऐसे सारे प्रदर्शन जांच के घेरे में आ जाएंगे, जिससे हमारे अपने ही प्रदर्शन से हमारी सुरक्षा खतरे में न पड़ जाए। अभी इस बात का पूरा विश्लेषण करना है कि नया कानून शत्रुतापूर्ण तत्वों तक सूचना की पहुंच पर कितनी लगाम लगा पाएगा। इसका प्रभाव नेविगेशन उपकरणों के वाणिज्यिक उपयोग पर भी असर होने की संभावना है जैसे ओला और उबर जैसी सार्वजनिक परिवहन की कंपनियां सैटेलाइट नेविगेशन सिस्टम का व्यापक उपयोग करती हैं।

THE ECONOMIC TIMES

India's IPR regime is robust — almost

Commerce minister Nirmala Sitharaman is broadly right when she says that the country's intellectual property regime is fully formed and compliant with global norms. However, some caveats apply. Section 3(d) of the Indian patents law is wildly disliked by global pharma giants, even if its refusal to distinguish between different forms of the same molecule for the purpose patents unless the different forms have demonstrably different therapeutic efficacy is conceptually sound and compliant

with the World Trade Organisation's Trade-Related Intellectual Property Rights Agreement. India needs to evangelise its merits among other countries to garner support against rich-country resistance to it.

A second caveat is about the working of the compulsory licensing regime. Yes, India must retain the right to issue compulsory licences when confronted with a healthcare emergency as assessed by Indian authorities. But a compulsory licence should not be the first resort. An effort must first be made to arrive at a negotiated price for high-value but critical drugs, such as for cancer, on the strength of a bulk purchase agreement arrived at in coordination with hospitals and insurance companies. The next step should be price control.

Only when the price-controlled drug ceases to be available should compulsory licensing kick in. Nor can the country defend the view that import of a drug does not amount to working of a patent. Insufficient import might fall short of working a patent, but not import, per se. Then again, India's courts take far too long to settle patent disputes, incentivising Indian companies to knock off patented drugs and reap commercial gains till the courts stop them.

A final caveat is that merely having a good IPR regime will not produce innovation and creativity. That calls for many things, including a spirit of free inquiry untrammelled by intolerance of dissent or fear of hurting prickly sensibilities. It calls for universities with a vibrant intellectual life and functional autonomy. Could it be India is a wee bit deficient on this count, these days?